The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 4 | Issue 5 | May 2026
ISSN: 2583-973X (Online), SJIF IF: 5.6
Website: www.theacademic.in

उत्तराखंड में बौद्ध धर्म की ऐतिहासिकता: निरंतरता, विघटन और रूपांतरण की अविरल ऋंखला

दीप्ति राणा

असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, इतिहास, अ.प. ब.राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय अगस्त्यमुनि (रुद्रप्रयाग)

E Mail deeptirana.advo@gmail.com

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.20688085

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Accepted: 25-05-2026

Published: 10-06-2026

Keywords:

बौद्ध धर्म, शिलालेख, कालसी, चैत्य , तिब्बती परंपरा

ABSTRACT

उत्तराखंड अपनी विशिष्ट भौगोलिक और सांस्कृतिक संरचना के कारण सदैव तपस्वियों, साधकों के लिए मुख्य आकर्षण रहा है। विभिन्न धाराओं के रूप में यहां बौद्ध धर्म का प्रभाव सामाजिक सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराओं में दिखाई देता है। पौन या बौन धर्म के रूप इसकी निरंतरता पर भी चर्चा की जाती है। इस शोध पत्र का उद्देश्य उत्तराखंड में बौद्ध धर्म के आगमन, विकास, विघटन और आधुनिक रूपांतरण का ऐतिहासिक और पुरातात्त्विक अध्ययन प्रस्तुत करना है। इस शोधपत्र में अशोक कालीन शिलालेख, गुप्त कुषाण कालीन उत्खनन साक्ष्य, ह्वेनसांग जैसे तीर्थयात्रियों के विवरण तथा आधुनिक हिमालयी बौद्ध समुदायों के अध्ययन को केन्द्र में रखा गया है। इसके अतिरिक्त एलेक्जेंडर कनिंघम,राहुल सांकृत्यानन,हरि कृष्ण रतूड़ी और शिवप्रसाद डबराल के भी महत्वपूर्ण विवरणों को भी इस शोध पत्र में शामिल किया गया है।

परिचय

उत्तराखंड देवभूमि के रूप में सदैव से जाना जाता रहा है। पुराणों के कई आख्यानों का विवरण इसी देवभूमि से जुड़े रहे हैं। हिंदू धर्म के सभी देवी देवताओं से यह भूमि संबंधित रही है। हिंदू धर्म के आख्यानों के मध्य यहां बौद्ध धर्म के साक्ष्य भी प्राप्त हुए हैं,जो आज भी जाड़, खांपा और भोटिया जनजातियों के सांस्कृतिक आचार व्यवहार में दिखाई देते हैं। तिब्बत से प्रभावित उत्तराखंड के क्षेत्रों में बौद्ध परंपराओं के अवशेष अभी भी दृश्यमान हैं। कालसी के अशोक के अभिलेख से लेकर संभवतः शंकराचार्य जी के उत्तराखंड आगमन तक बौद्ध धर्म का प्रभाव के प्रमाण यहां उपलब्ध रहे हैं।

ऐतिहासिक भौगोलिक तथा स्रोत विश्लेषण

उत्तराखंड की भौगोलिक स्थिति, गंगा मैदान और तिब्बती हिमालय के बीच के संपर्क मार्ग तथा अनेक व्यापारिक एवं तीर्थयात्रा पथों के निर्माण ने इसे एक बहु सांस्कृतिक अंतराल के रूप में विकसित किया। बौद्ध धर्म का आगमन यहां केवल धार्मिक प्रचार तक सीमित नहीं रहा, बल्कि तीर्थ यात्रा, व्यापार और शैक्षणिक आदान प्रदान के अनुपूरक के रूप में भी विकसित हुआ।

प्राथमिक इतिहास स्रोतों में चीनी तीर्थयात्री ह्वेनसांग के ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। ह्वेनसांग ने आधुनिक काशीपुर के रूप में पहचाने जाने वाले गोविषाण नामक स्थान पर बौद्ध मठों, विशाल विहारों और श्रमणों की उपस्थिति का विस्तृत वर्णन दिया है।

ह्वेनसांग के विवरण उत्तराखंड के बौद्ध इतिहास के लिए एक महत्त्वपूर्ण लिखित स्रोत हैं। उसके अनुसार ब्रह्मपुरा और गोविषाण जैसे स्थानों पर अनेक बौद्ध मठ थे, जहां सैकड़ों श्रमण रहते थे और विभिन्न धार्मिक और दार्शनिक विषयों पर अध्ययन और चर्चा होती थी। इन विवरणों के आधार पर आधुनिक पुरातत्वविदों ने इन स्थलों की पहचान काशीपुर आदि के रूप में की है, जो यह दर्शाती है कि 7वीं शताब्दी तक यह धर्म यहां सजीव और संस्थागत रूप से उपस्थित था।

सम्राट अशोक के शिलालेख के मिलने से उत्तराखंड में बौद्ध धर्म का इतिहास मौर्य युग तक जाता है। ये शिलालेख राजनीतिक और धार्मिक नीति के अन्तर्संबंध को दर्शाते हैं और यह तर्क देने का आधार प्रदान करते हैं कि मौर्यकाल में बौद्ध धर्म को यहां संरक्षण और प्रसार हुआ होगा।

इसके अतिरिक्त, सम्राट अशोक के तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व के शिलालेख, विशेषकर कालसी शिलालेख इस क्षेत्र में बौद्ध धर्म आधारित नीतिगत संरक्षण के प्रत्यक्ष साक्ष्य हैं। इन साक्ष्यों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उत्तराखंड न केवल धार्मिक तीर्थों का केन्द्र था, बल्कि गंगा मैदानों और तिब्बती क्षेत्रों के बीच एक सांस्कृतिक धार्मिक संपर्क मार्ग के रूप में भी कार्य करता था, जिसमें बौद्ध मतों का आगमन और अनुकूलन निरंतर रूप से संभव हुआ।

मौर्य काल में उत्तराखंड में बौद्ध धर्म का प्रसार अशोक के समय विशेष रूप से बढ़ा और इसे उत्तराखंड के कुछ प्राचीन बौद्ध केंद्रों तथा अभिलेखीय परंपरागत साक्ष्यों से समझा जाता है। अशोक के शासनकाल में बौद्ध धर्म का प्रचार उत्तराखंड क्षेत्र तक पहुंचा; कुछ परंपराओं के अनुसार तीसरी बौद्ध संगीति के बाद धर्मप्रचारक यहां भेजे गए। काशीपुर-गोविषाण, हरिद्वार-गंगाद्वार, कनखल और आसपास के क्षेत्रों को बौद्ध गतिविधि और चिंतन के केंद्र के

रूप में देखा जाता है। कुछ स्रोतों में अशोक द्वारा गोविषाण और अहिरछत्र में स्तूप बनवाने का उल्लेख मिलता है, जिससे इस क्षेत्र में बौद्ध उपस्थिति की पुष्टि मानी जाती है।

उत्तराखंड के दक्षिणी भाग, खासकर भाबर और शिवालिक क्षेत्र, में हीनयान परंपरा का प्रभाव अधिक बताया गया है।मौर्यकाल में उत्तराखंड केवल राजनीतिक रूप से ही नहीं, बल्कि धार्मिक-सांस्कृतिक रूप से भी उत्तर भारत की बौद्ध गतिविधियों से जुड़ा हुआ था। अशोक के बौद्ध धर्म-प्रचार ने इस क्षेत्र में भिक्षु परंपरा, स्तूप-निर्माण और बौद्ध चिंतन को बढ़ावा दिया। बाद के समय में महायान प्रभाव भी आया, लेकिन मौर्यकाल के संदर्भ में प्रारंभिक बौद्ध विस्तार और अशोकीय संरक्षण सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है।

पुरातात्त्विक साक्ष्य एवं प्रमुख उत्खनन स्थल

काशीपुर (गोविषाण)

काशीपुर क्षेत्र में अर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया द्वारा किए गए उत्खनन ने एक विशाल ईंटीय संरचना और स्तूप के अवशेष का पता लगाया। यहां के वास्तुकला में गुप्त और उत्तर गुप्त स्थापत्य के स्पष्ट लक्षण देखे जाते हैं, जैसे चैत्य प्रकृति की खिड़की सदृश रूप रेखा, प्रदक्षिणा पथ आदि। ह्वेनसांग के विवरण के अनुसार यह स्थान संभवतः एक बृहद मठ निवास समूह था, जहां ध्यान, अध्ययन और प्रार्थना के लिए श्रमण आते रहे होंगे।

इस स्थल की विशेषता यह है कि यहां की वास्तुकला गंगा मैदानों से लेकर हिमालयी क्षेत्रों तक के अन्तर् संबंध को दर्शाती है।यहां बड़े विहारों की बजाय छोटे छोटे, लेकिन बहु स्तरीय विहार दिखाई देते हैं, जो गंगा मैदानी महाविहार और तिब्बती चैत्य सदृश संरचनाओं के मध्य उत्पत्ति के रूप में व्याख्यायित किए जा सकते हैं।

मोरध्वज और उत्तर दक्षिण गमन पथ

मोरध्वज के उत्खनन स्थल में अनेक सांस्कृतिक परतों का पता चला है, जो लगभग 5वीं शताब्दी ईसा पूर्व से लेकर 4वीं शताब्दी ईसवी तक की गतिविधियों का संकेत देती हैं। यहां कुषाण कालीन वस्तुएं, जिनमें स्वर्ण सिक्के,मूर्तिकला के टुकड़े और अन्य वस्तुएं मिले हैं, जो इस स्थल के दीर्घकालिक बौद्ध व्यापारिक महत्त्व की ओर संकेत करते हैं।

इस स्थल का आधार यह भी है कि यह उत्तर भारतीय व्यापार मार्गों और धार्मिक तीर्थयात्रा के अन्तर्संबंध का एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र रहा होगा। यहां बौद्ध श्रमणों, व्यापारियों और तीर्थयात्रियों का आपसी आदान प्रदान था।

गुप्तकाशी और रुद्रप्रयाग क्षेत्र

गुप्तकाशी क्षेत्र के नलाचट्टी में एक पत्थर के छोटे स्तूप का अवशेष दृष्टिगोचर होता है, जिसकी संरचना तिब्बती चैत्य जैसे प्रतीत होती है। यह विशेषता हिमालयी बौद्ध वास्तुकला और वज्रयान/लामिक प्रभावों के अन्तर्संबंध को दर्शाती है। रुद्रप्रयाग के आस पास अन्य छोटे छोटे बौद्ध स्मारकों के शेषांश भी खोजे गए हैं, जो यह बताते हैं कि यह क्षेत्र मध्ययुगीन बौद्ध गतिविधियों के साक्ष्य मिलते हैं। यह भी संभाव्य है कि यहां के स्तूप और चैत्य सदृश संरचनाएं केवल धार्मिक उपासना के लिए ही नहीं, बल्कि तीर्थयात्रियों के लिए रहने के स्थान के रूप में भी उपयोग में लाया जाता था, जो उन्हें ऊंचे हिमालयी मार्गों पर दिशा और स्थान पहचान उपलब्ध कराती थीं।

सेनापानी और तराई क्षेत्र

सेनापानी जैसे स्थलों से दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व के लाल बलुआ पत्थर के स्तूप और ब्राह्मी लिपि के पत्थर खंड प्राप्त हुए हैं, जो स्पष्ट रूप से उत्तराखंड की तराई भाग में बौद्ध धर्म की उपस्थिति को दर्शाते हैं। इन स्थलों का आधार यह भी है कि यहां के स्तूप गंगा मैदानी बौद्ध केन्द्रों से जुड़े थे और बाद में स्थानीय हिंदू रीति रिवाजों के प्रभाव में आकर धीरे धीरे परिवर्तित या पुनःअधिगृहित हो गए होंगे।

बौद्ध वास्तुकला में हिमालयी रूपांतरण

पुरातात्त्विक आधार पर यह स्पष्ट है कि उत्तराखंड में बौद्ध स्मारकों का निर्माण अक्सर स्थानीय सामग्री और वातावरण के अनुसार किया गया था। अनेक स्थलों पर गंगा के मैदानों जैसे विशाल स्तूपों की बजाय छोटे छोटे, बेलनाकार या घंटी आकार की संरचनाएं देखी जाती हैं, जो तिब्बती या हिमालयी बौद्ध विवरणों से निकटता रखती हैं।

इसके अतिरिक्त, कई स्थलों पर बौद्ध संरचनाओं के ऊपर उत्तरकाल में हिंदू मंदिरों का निर्माण हुआ है, जो धार्मिक निरंतरता और सांस्कृतिक "रिसाइक्लिंग" की एक विशिष्ट प्रवृत्ति को इंगित करता है। इस प्रकार, बौद्ध और हिन्दू धार्मिक विरासत यहां केवल प्रतिद्वंदी नहीं, बल्कि अन्तर्संबंधित रूप में भी विकसित दिखाई देती हैं।

साहित्यिक, अभिलेखीय और मौखिक साक्ष्य

इसके अतिरिक्त, स्थानीय लोककथाओं और मौखिक परम्पराओं में भी बौद्ध मोनास्टिक गतिविधियों के संकेत मिलते हैं। गढ़वाल और कुमाऊं के कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में बौद्ध श्रमणों के आगमन और धार्मिक उपदेशों की यादें आज भी लोक कथाओं के रूप में जीवित हैं। यह बताता है कि बौद्ध धर्म ने केवल मठ नगरों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि ग्रामीण जनसाधारण के बीच भी विशिष्ट धार्मिक और सामाजिक प्रभाव डाला।

जनजातीय और हिमालयी बौद्ध परम्पराएं

हिमालय की ऊंचाई और दुर्गम भूमि ने यहां की जनजातीय समुदायों को एक विशेष सांस्कृतिक धार्मिक अस्तित्व बनाए रखने में सहायता दी। जाड़, खम्पा और कुछ अन्य भोटिया प्रकार के समूह तिब्बती प्रभावित बौद्ध रीति रिवाज का आज भी पालन करते हैं। विशेष रूप से 1962 के बाद भारत चीन और भारत नेपाल की सीमा संदर्भ में कई समुदाय विस्थापित या नए क्षेत्रों में बसे, परन्तु उनकी बौद्ध धार्मिक अभ्यास पद्धतियां अपेक्षाकृत सुरक्षित रही हैं।

देहरादून के क्लेमेंट टाउन स्थित बुद्ध विहार जैसे आधुनिक मठ संस्थान आज तिब्बती शाक्य और अन्य वज्रयान परम्पराओं का केन्द्र बन कर उभरे हैं। ये स्थल न केवल धार्मिक अध्ययन और आध्यात्मिक अभ्यास के माध्यम हैं, बल्कि बौद्ध सांस्कृतिक पुनरुद्धार और धार्मिक पर्यटन के भी महत्त्वपूर्ण केंद्र बन चुके हैं। इस प्रकार, उत्तराखंड की बौद्ध परम्परा केवल प्राचीन खंडहरों तक सीमित नहीं रही, बल्कि आधुनिक तिब्बती प्रभावित समुदायों के माध्यम से एक जीवंत धारा बनी हुई है।

बौद्ध धर्म का हिमालयी अनुकूलन: व्यावहारिक और वास्तुकला सम्बन्धी पहलू

उत्तराखंड की भौगोलिक विशेषताएं ऊंचाई, ठंडी जलवायु, दुर्गम घाटियां और सीमित जीवन संसाधन ने यहां के बौद्ध अभ्यास को एक विशिष्ट रूप दिया। श्रमण अकसर छोटे छोटे विहारों में रहते थे, जहां ध्यान, जप और तप को प्राथमिकता दी जाती थी, जबकि गंगा मैदानी केंद्रों में विशाल विश्वविद्यालय सदृश महाविहारों का प्रचलन रहा। यह भिन्नता दर्शाती है कि धार्मिक तत्व को स्थानीय जीवन शर्तों के अनुसार अनुकूलित किया गया था।

वास्तुकला में भी यह अनुकूलन स्पष्ट दिखाई देता है। यहां बड़ी बड़ी ईंट मजबूती वाली इमारतें कम और छोटे छोटे, प्रायः पत्थर या स्थानीय ईंट से बने स्तूप अधिक आम थे, जो बाढ़ और भूस्खलन के खतरों के बीच अधिक उपयुक्त थे। इसके अतिरिक्त, तिब्बती बौद्ध वास्तुकला के प्रभाव से चर्तेन सदृश संरचनाओं और धार्मिक चिन्हों का प्रयोग बढ़ा, जिससे यहां की बौद्ध वास्तुकला दृष्टिगोचर रूप से भी गंगा मैदानी बौद्ध स्मारकों से भिन्न प्रतीत होती है।

संरक्षण, पर्यटन और नीतिगत प्रस्ताव

उत्तराखंड में बौद्ध विरासत के संरक्षण के लिए एक व्यवस्थित और बहु विषयक दृष्टिकोण आवश्यक है। प्रमुख स्थलों जैसे काशीपुर, मोरध्वज, कालसी और गुप्तकाशी नालाचट्टी को ASI और राज्य सरकार के संयुक्त प्रयास से एकीकृत विरासत संरक्षण कार्यक्रम में लिया जाना चाहिए। इसमें GIS आधारित मानचित्रण, ऐतिहासिक

पुरातात्त्विक डेटाबेस का निर्माण और आधुनिक डिजिटल आर्काइव प्रणाली शामिल होने चाहिए, जिससे भविष्य के शोधकर्ताओं को सुविधाजनक दृश्य संसाधन उपलब्ध रहें।

बौद्ध धर्म- निरंतरता, विघटन और रूपांतरण

उत्तराखंड में बौद्ध धर्म की ऐतिहासिकता पर आधुनिक शोधकर्ताओं के बीच कई दृष्टिकोण प्रचलित हैं, जिनमें दो मुख्य विचारधाराएं इस प्रकार हैं। प्रथम दृष्टिकोण के अनुसार यहां बौद्ध धर्म की उपस्थिति लगभग निर्बाध रूप से बनी रही और केवल रूप रूपांतरण के रूप में विकसित होती रही। इस पक्ष में अशोक शिलालेखों, काशीपुर और मोरध्वज के उत्खनन तथा ह्वेनसांग के वर्णन को मुख्य आधार माना जाता है, जो बताते हैं कि क्षेत्र विशेष में बौद्ध धर्म ने अपनी विशिष्ट पहचान बनाए रखी।

द्वितीय दृष्टिकोण के अनुसार भारतीय उपमहाद्वीप के अन्य भागों की भांति उत्तराखंड में भी मध्ययुग में बौद्ध धर्म का प्रभाव क्षीण हुआ और कई स्थल हिन्दू या अन्य धर्मीय अधिकारों में परिवर्तित हो गए। इस दृष्टिकोण के अनुसार, आधुनिक तिब्बती प्रभावित बौद्ध समुदाय अपेक्षाकृत नए आगन्तुक परम्पराएं हैं, जो 19वीं 20वीं शताब्दी के राजनीतिक और सीमा संबद्ध बदलावों के बाद यहां बसे।

वास्तव में दोनों दृष्टिकोणों के बीच एक समेकित दृष्टिकोण अधिक उपयुक्त लगता है। पुरातात्त्विक और लेखन साक्ष्यों से स्पष्ट है कि उत्तराखंड में बौद्ध धर्म ने लंबी अवधि तक अस्तित्व रखा, लेकिन मध्ययुगीन राजनीतिक परिस्थितियों और सामाजिक बदलावों के कारण वह क्षेत्र विशेष में कमजोर पड़ गया। फिर भी, हिमालय की भौगोलिक और सांस्कृतिक विशिष्टताओं ने तिब्बती सीमांत बौद्ध परम्पराएं को इस क्षेत्र में जीवित रखने और उन्हें आधुनिक रूप देने की अनुमति दी।

क्या किसी राजवंश ने बौद्ध धर्म को संरक्षण दिया?

उत्तराखंड के इतिहास में कोई ऐसा स्पष्ट राजवंश नहीं मिलता जो बौद्ध धर्म को औपचारिक रूप से "राज धर्म" के रूप में अधिकारिक तौर पर प्रश्रय देता हो, लेकिन हिमालय क्षेत्र में खस और कत्यूरी पूर्व समय के स्थानीय राज्य ,जाति संरचनाओं के बीच बौद्ध धर्म का प्रभाव और स्थानीय संरक्षण अवश्य रहा है, जिसका अध्ययन आधुनिक शोध में दर्शाया गया है।

1. *खस और कत्यूरी राज संदर्भ*

हिमालय विशेषज्ञ चंद्रभूषण जैसे लेखकों के इंटरव्यू और शोध प्रस्तुतियों में बताया गया है कि उत्तराखंड के खस और कत्यूरी राजाओं के समय बौद्ध धर्म का प्रभाव व्यापक था, लेकिन समय के साथ ये राजवंश धीरे धीरे बौद्ध

धर्म से हटकर ब्राह्मण पीठ आधारित हिंदू धर्म की ओर झुक गए। इस विश्लेषण के अनुसार, खस और कत्यूरी राजाओं के शासनकाल में हिमालय क्षेत्र (जिसमें आज का उत्तराखंड आता है) में बौद्ध मठ, स्तूप और लोक बौद्ध परंपराएं अस्तित्व में थीं, जिन्हें स्थानीय राजाओं के रूप में संरक्षण या अनौपचारिक प्रश्रय अवश्य मिला होगा,लेकिन बाद के समय में आदि शंकराचार्य के धर्म प्रचार, मंदिर स्थापना और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण आदि के प्रभाव से इन राजवंशों ने बौद्ध धर्म को त्यागकर हिंदू धर्म को अधिकारिक सामाजिक ढांचे में स्थापित किया।

इस प्रकार यह नहीं कहा जा सकता कि "कत्यूरी राजवंश ने बौद्ध धर्म को राज धर्म घोषित किया", बल्कि ऐसा कहा जा सकता है कि उनके शासनकाल पूर्व और प्रारंभिक अवधि में बौद्ध धर्म का प्रभाव था और उसका अनौपचारिक स्थानीय संरक्षण अवश्य रहा, जो बाद में हिंदू धर्म आधारित राज व्यवस्था द्वारा धीरे धीरे अधिगृहीत हो गया।

एक आधुनिक शोध लेख "उत्तराखण्ड के शहरों में बौद्ध धर्म का प्रसार" में बताया गया है कि उत्तराखंड के कुछ नगर और तीर्थ क्षेत्रों में प्राचीन मध्यकालीन अवधि में बौद्ध धर्म का प्रभाव था, जो बाद में हिंदू धर्म के व्यापक विस्तार के कारण धुंधला हो गया। इस लेख के अनुसार, उत्तराखंड के विभिन्न शहरों में बौद्ध संस्थानों और लोक परंपराओं का अवशेष मिलता है,लेकिन इन अवशेषों को राजवंश स्तरीय औपचारिक प्रश्रय (जैसे अशोक या पाल वंश की तरह) के रूप में नहीं दिखाया गया, बल्कि स्थानीय राज जाति संरचनाओं के बीच अनौपचारिक लोक स्तरीय संरक्षण के रूप में दर्शाया गया है।

अतः उत्तराखंड के लिए कोई ऐसा राजवंश नहीं मिलता जो बौद्ध धर्म को औपचारिक राज धर्म के रूप में स्वीकृत और उसे उनके शासन संस्थान का आधार घोषित करता हो, जैसे अशोक वंश या पाल राजवंश ने किया था; लेकिन खस और कत्यूरी पूर्व राज जाति संरचनाओं के समय बौद्ध धर्म का प्रभाव था और उसे स्थानीय अनौपचारिक रूप से संरक्षण और प्रश्रय अवश्य मिला, जो बाद में हिंदू धर्म केंद्रित राज ढांचों द्वारा धीरे धीरे अधिगृहित हो गया।

हरि कृष्ण रतूड़ी ने अपनी प्रमुख किताब "गढ़वाल का इतिहास" (पहली बार 1928 में प्रकाशित) में बौद्ध धर्म को स्वतंत्र दार्शनिक चर्चा के रूप से नहीं, बल्कि गढ़वाल उत्तराखंड के ऐतिहासिक सामाजिक और धार्मिक सत्तात्मक विकास संदर्भ में संकेतात्मक रूप में दर्शाया है। वे बौद्ध धर्म को एक विशेष "धर्म परिचय" अध्याय के रूप में नहीं लिखते, बल्कि उसे जाति विरोधी, लोक केंद्रित और राज सत्ता संघर्षी धर्म धारा के रूप में उपयोग करते हैं, जो बाद में ब्राह्मण पीठ द्वारा धीरे धीरे अधिगृहीत और रूपांतरित होती है। वे बौद्ध धर्म को एक सामाजिक न्याय उन्मुख आंदोलन के रूप में दर्शाते हैं, जो ब्राह्मण मंडल के अधिकार संरचना के विरुद्ध खड़ा होता है।

उत्तराखंड में बौद्ध धर्म के इतिहास पर अलेक्जेंडर कनिंघम का अध्ययन

अलेक्जेंडर कनिंघम ने उत्तराखंड के उत्तरी हिमालयी क्षेत्र (खासकर ऋषिकेश–हरिद्वार गलियारा और गंडकी नेपाल सीमावर्ती धारा) में बौद्ध अवशेषों के बारे में सीधे विस्तृत उल्लेख नहीं किए, बल्कि उन्होंने उत्तराखंड हरिद्वार के बारे में मुख्यतः गंगा तटीय हिंदू पीठ और तीर्थ संदर्भों पर टिप्पणी की है, जिसमें बौद्ध अवशेष या तो अनुपस्थित थे या उन्होंने उनका विशेष ध्यान नहीं दिया।

कुछ आधुनिक शोध लेख इस बात को दोहराते हैं कि चीनी यात्री ह्वेनसांग और अंग्रेज़ अधिकारी अलेक्जेंडर कनिंघम दोनों ने हरिद्वार को गंगा के तट पर एक प्रमुख तीर्थ नगर के रूप में अंकित किया, जहां हिंदू परंपराओं का पालन किया जाता है। इन लेखों में इसका उल्लेख इस भाव लेख से होता है कि कनिंघम ने हरिद्वार/उत्तरकाशी क्षेत्र में अशोक कालीन या गांधारी शैली वाले बौद्ध स्तूप विहार जैसे स्पष्ट अवशेष नहीं उजागर किए, इसके बजाय उन्होंने यहां की पूजा और तीर्थ अवधारणाओं पर अधिक ज़ोर दिया; यानी उनकी रिपोर्टों में उत्तराखंड हिमालय के लिए बौद्ध अवशेषों का लोप या अभाव ही इंगित होता है, न कि कोई विस्तृत बौद्ध स्थल विवरण।

कनिंघम ने उत्तराखंड के मामले में कोई विशिष्ट बौद्ध स्थल विवरण नहीं छोड़ा है। यह दृष्टि उनकी आधिकारिक रिपोर्टों (ASIR व अन्य मोनोग्राफ) और आधुनिक शोधों के तुल्यकाल विश्लेषण पर आधारित है। अतः अलेक्जेंडर कनिंघम ने उत्तराखंड के बौद्ध अवशेषों पर कोई विशेष निबंध या विस्तृत खोज रिपोर्ट नहीं छोड़ी। इस प्रकार उनका लिखित योगदान उत्तराखंड के लिए बौद्ध अवशेष विशेष नहीं, बल्कि भारत नेपाल तिब्बत के बड़े बौद्ध स्थलों की खोज तथा अशोक के शिलालेखों और महत्वपूर्ण स्तूप विहारों के वैज्ञानिक सर्वेक्षण तक सीमित माना जाता है, जहां उत्तराखंड स्पष्टतः बुद्ध इतिहास का मुख्य भाग नहीं दिखाई देता।

उत्तराखंड में बौद्ध दर्शन के इतिहास पर राहुल सांकृत्यायन का अध्ययन

राहुल सांकृत्यायन ने उत्तराखंड (विशेषकर गढ़वाल हिमालय) के संदर्भ में बौद्ध धर्म को "सांस्कृतिक धार्मिक ओवरलैप" के रूप में देखा है, अर्थात् यहां बौद्ध और हिंदू परंपराओं का जटिल मिश्रण है, जिसे वे अपनी यात्रा निर्भर लेखन—परंपरा में विश्लेषित करते हैं।

1. हिमालय परिचय (गढ़वाल) में बौद्ध उपस्थिति

राहुल सांकृत्यायन की ग्रंथ श्रृंखला 'हिमालय परिचय' (विशेषकर भाग 1 "गढ़वाल") में उन्होंने उत्तराखंड के हिमालयी क्षेत्रों का भौगोलिक सांस्कृतिक विवरण दिया है, जिसमें "धर्म" शीर्षक अनुच्छेद में बौद्ध धर्म को अलग

कॉलम के रूप में सूचीबद्ध किया गया है, साथ ही वहां की ब्राह्मण हिंदू, जैन, सिख, मुसलमान आदि धर्मों का भी उल्लेख है।

इसका तात्पर्य यह है कि वे गढ़वाल के धार्मिक वातावरण को बहुधर्म आधारित मानते हैं, जहां बौद्ध धर्म एक सक्रिय परंपरा के रूप में मौजूद रहा है, हालांकि वर्तमान समय के प्रलेखों से ज्यादा इसका उल्लेख "अतीत की धार्मिक विविधता" के रूप में चित्रित होता है; यानी वे इसे एक ऐतिहासिक सांस्कृतिक तत्व के रूप में दर्शाते हैं, न कि विशेष धर्म सम्बन्धी आलोचना के रूप में। इस प्रकार राहुल सांकृत्यानन गढ़वाल के धार्मिक स्थापत्य संदर्भ में बौद्ध तत्वों को "अवशेष" या "अधिप्राप्त संरचना" के रूप में देखते हैं, जहां प्राचीन बौद्ध या जैन प्रभाव वाली मूर्ति शैली बाद में वैष्णव नारायण धर्म के ढांचे में फिट कर दी गई है; इन्हीं अवलोकनों को आधुनिक लेखक उनके "बौद्ध धर्म से गहरी रूचि और धार्मिक तुलना दृष्टि" के संदर्भ में उद्धृत करते हैं।

उत्तराखंड हिमालय की 17 यात्राएं करके सांकृत्यायन ने यहां की सांस्कृतिक धार्मिक रेखाओं का दस्तावेज़ीकरण किया। तिब्बत संबंधी अपने अनुभवों के आलोक में वे उत्तराखंड को भारत तिब्बत बौद्ध संस्कृतिक संबंधों की पुरानी गलियारे का हिस्सा मानते हैं; यह दृष्टि उनकी 'हिमालय परिचय' और अन्य यात्रा वृत्तांतों में बराबर मौजूद रहती है, जहां वे गढ़वाल कुमाऊँ को न केवल भौगोलिक बल्कि धार्मिक सांस्कृतिक परिक्रमा के महत्त्वपूर्ण खंड के रूप में चित्रित करते हैं।

उत्तराखंड में बौद्ध धर्म पर शिवप्रसाद डबराल का अध्ययन

शिवप्रसाद डबराल ने उत्तराखंड में बौद्ध धर्म पर व्यापक ऐतिहासिक-पुरातात्त्विक दृष्टि से लिखा है। डबराल ने उत्तराखंड में बौद्ध धर्म के प्रसार, बौद्ध स्थविरों और ऐतिहासिक बौद्ध केंद्रों पर चर्चा की। एक स्रोत में उत्तराखंड के बौद्ध स्थविरों का उल्लेख है, और दूसरे में उत्तराखंड के नगरों में बौद्ध धर्म के प्रसार पर चर्चा मिलती है, जो डबराल-परंपरा के शोध-क्षेत्र से जुड़ी मानी जाती है।डबराल ने उत्तराखंड के इतिहास-लेखन में बौद्ध धर्म की उपस्थिति, उसके प्रसार और क्षेत्रीय बौद्ध परंपराओं पर प्रकाश डाला। उनका योगदान अलग धार्मिक ग्रंथ के रूप में कम, और व्यापक ऐतिहासिक-पुरातात्त्विक विवेचन के रूप में अधिक महत्वपूर्ण है। डबराल उत्तराखंड को केवल एक भौगोलिक क्षेत्र नहीं, बल्कि प्राचीन सांस्कृतिक-संक्रमण का क्षेत्र मानते थे। इसी दृष्टि से उन्होंने बौद्ध धर्म के प्रभाव को उत्तराखंड के नगरों, मार्गों और पर्वतीय-तराई क्षेत्रों के इतिहास से जोड़कर देखा। उपलब्ध संदर्भों के अनुसार उत्तराखंड के कुछ प्रमुख स्थानों—जैसे गोविषाण, गंगाद्वार, कनखल और आसपास के क्षेत्रों—में बौद्ध उपस्थिति और प्रचार की चर्चा उनके व्यापक इतिहास-लेखन की परंपरा में आती है।

उनके अध्ययन से यह संकेत मिलता है कि उत्तराखंड में बौद्ध धर्म का प्रभाव केवल धार्मिक नहीं था, बल्कि उसने स्थापत्य, स्तूप-परंपरा, भिक्षु-आवागमन और क्षेत्रीय सांस्कृतिक आदान-प्रदान को भी प्रभावित किया। डबराल ने उत्तराखंड के पुरातात्त्विक और ऐतिहासिक साक्ष्यों को महत्व दिया, इसलिए बौद्ध धर्म को भी उन्होंने प्रमाण-आधारित ऐतिहासिक संदर्भ में समझा।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि उत्तराखंड में बौद्ध धर्म ने केवल एक अतिरिक्त धार्मिक विकल्प नहीं, बल्कि एक गहन ऐतिहासिक सांस्कृतिक धारा के रूप में अपनी उपस्थिति बनाए रखी। अशोक काल से लेकर गुप्त कुषाण तथा उत्तर युगीन तिब्बती प्रभावित परम्पराओं तक इसका इतिहास विस्तृत और बहुआयामी है। पुरातात्त्विक स्थल (काशीपुर, मोरध्वज, नला, सेनापानी) और लेखन साहित्य (ह्वेनसांग, अशोक शिलालेख) दोनों ही इस बात के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि यह क्षेत्र बौद्ध चिंतन और अभ्यास का एक महत्त्वपूर्ण हिमालयी केंद्र रहा।

आधुनिक समय में इस विरासत को बस इतिहास की जंग लगी चीज़ के रूप में नहीं, बल्कि एक जीवंत सांस्कृतिक आध्यात्मिक धारा के रूप में देखा जाना चाहिए। उचित संरक्षण, अनुसंधान और अध्ययन के माध्यम से यह विरासत न केवल इतिहासकारों के लिए महत्त्वपूर्ण रहेगी, बल्कि स्थानीय अर्थव्यवस्था और सांस्कृतिक आत्म अभिमान के लिए भी एक महत्त्वपूर्ण आधार बन सकती है।

कनिंघम ने उत्तराखंड सहित उत्तर भारत की बौद्ध पुरातत्त्व-परंपरा को समझने की वैज्ञानिक विधि दी, जबकि ह्वेनसांग ने बौद्ध धर्म के जीवित धार्मिक-भौगोलिक स्वरूप का विवरण दिया। दोनों स्रोत मिलकर यह दिखाते हैं कि उत्तराखंड केवल आधुनिक पर्वतीय क्षेत्र नहीं, बल्कि प्राचीन बौद्ध-संस्कृति के अध्ययन में भी महत्वपूर्ण रहा है।डबराल के अनुसार उत्तराखंड में बौद्ध धर्म एक बाहरी आयात नहीं था, बल्कि मौर्यकाल से विकसित होकर क्षेत्रीय इतिहास का हिस्सा बन गया था। उनके लेखन का मूल संदेश यह है कि उत्तराखंड की सांस्कृतिक पहचान अनेक धार्मिक परंपराओं के सम्मिलन से बनी है।अंतत: यह कहा जा सकता है कि उत्तराखंड में बौद्ध धर्म का सिमटना कोई अलग से होने वाला घटनाक्रम नहीं था, बल्कि यह संपूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप में बौद्ध धर्म के पतन का ही एक घटक था।

संदर्भ सूची

Singh, Sunil, Mendaly, Subodha, & Farswan, Yogambar Singh. (2025).

Buddhist Heritage of Uttarakhand: Archaeology, Culture and Sustainable Tourism. Journal of Historical, Archaeological and Anthropological Studies (JHAAS), 2025, No. 1–2. https://www.pbjournals.com/jhaas

Kumar, D. K. (2020). Buddhism in Margiana: A Morphological Survey. Indian Journal of Historical, Social and Economic Studies. Dehradun, Uttarakhand.

NITI Aayog (2023). Challenges faced in Heritage Management in India and Policy Recommendations. Government of India.

Shahi, D. K. (2019). Buddhism in Margiana: A Morphological Survey. Regional Journal of Himalayan Studies and Social Sciences, 10(4), 1051–1054.

शोध लेख: "Role of Alexander Cunningham in the Discovery of Buddhist Civilisation"

राहुल सांकृत्यायन, 'हिमालय परिचय' (भाग 1: गढ़वाल) – यहीं पर गढ़वाल के धर्मीय संदर्भ में बौद्ध धर्म का स्पष्ट उल्लेख और विश्लेषण मिलता है।

"गढ़वाल का इतिहास" – हरि कृष्ण रतूड़ी (प्रथम संस्करण 1928, भागीरथी प्रकाशन गृह, टिहरी गढ़वाल)

विश्लेषण इंटरव्यू "पं. हरिकृष्ण रतूड़ी – गढ़वाल का प्रथम प्रमाणिक इतिहास" (डॉ. हरीश चंद्र लखेड़ा, Himalayilog चैनल)

डॉ. शिवप्रसाद डबराल: उत्तराखंड का इतिहास (12 खंडों में)

डॉ. शिवप्रसाद डबराल: अलकनंदा-बेसिन ट्रांसह्यूमन्स, घुमंतू और मौसमी प्रवास का एक अध्ययन

डॉ. शिवप्रसाद डबराल: उत्तराखंड के भौटांतिक